भाषायी अंधराष्ट्रीयता के दुष्परिणाम

drishtiias.com/hindi/printpdf/the-dangers-of-linguistic-chauvinism

सन्दर्भ

भारत का संविधान यूँ ही नहीं दुनिया का सबसे बेहतरीन संविधान कहा जाता है, संविधान निर्माण के दौरान संविधान सभा में कभी तीखी बहसें हुईं, तो कभी शानदार वक्तव्यों ने अन्य सदस्यों को मेजें थपथपाने पर मजबूर कर दिया। उल्लेखनीय है कि संविधान सभा की सबसे तीखी बहस हिंदी को भारत की आधिकारिक भाषा बनाने को लेकर हुई थी, यह बहस इतनी तीखी थी कि भारतीय संविधान के शिल्पकार डॉ भीमराव अम्बेडकर को यह कहना पड़ा कि 'संविधान सभा में जितनी गहमागहमी हिंदी को आधिकारिक भाषा बनाने को लेकर देखने को मिली, वह अभूतपूर्व था'।

संविधान सभा में हिंदी को आधिकारिक भाषा का दर्ज़ा महज़ एक मत के अंतर से प्राप्त हो गया था। लेकिन यहाँ सवाल यह है कि अभी भी हिंदी सही मायने में आधिकारिक भाषा क्यों नहीं बन पाई है? हाल ही में यह देखा गया है कि मानव संसाधन विकास मंत्रालय, सी.बी.एस.ई. के सभी विद्यालयों तथा सभी केंद्रीय विद्यालयों में कक्षा 10 तक हिन्दी को अनिवार्य विषय बनाने की दिशा में कार्य कर रहा है और भारत के राष्ट्रपति और मंत्री जल्द ही अपने भाषणों को केवल हिंदी में देने के लिये बाध्य होंगे। ऐसे में इस बात की पूरी सम्भावना है कि गैर-हिन्दी भाषी राज्य विरोध में अपनी आवाज फिर से बुलंद करेंगे।

पृष्ठभूमि

- विदित हो कि 26 जनवरी, 1950 को जब हमारा संविधान लागू हुआ तो इसमें देवनागरी में लिखी जाने वाली हिंदी सहित 14 भाषाओं को आठवीं सूची में आधिकारिक भाषाओं के रूप में रखा गया था। संविधान के मुताबिक 26 जनवरी, 1965 में हिंदी को अंग्रेज़ी के स्थान पर देश की आधिकारिक भाषा बनना था और उसके बाद हिंदी में ही विभिन्न राज्यों को आपस में और केंद्र के साथ संवाद करना था। ऐसा आसानी से हो सके इसके लिये संविधान में 1955 और 1960 में राजभाषा आयोगों को बनाने की भी बात कही गई थी। इन आयोगों को हिंदी के विकास के सन्दर्भ में रिपोर्ट देनी थी और इन रिपोर्टों के आधार पर संसद की संयुक्त समिति के द्वारा राष्ट्रपति को इस संबंध में कुछ सिफारिशें करनी थीं।
- गौरतलब है कि देश को आज़ादी के बाद के 20 सालों में भाषा के मुद्दे ने सर्वाधिक परेशान किया था और एक समय तो स्थिति इतनी गंभीर हो गई थी कि भाषा के विवाद के कारण देश का विखंडन अवश्यंभावी दिखने लगा था। दक्षिण भारत के राज्यों में रहने वालों को डर था कि हिंदी के लागू हो जाने से वे उत्तर भारतीयों के मुकाबले विभिन्न क्षेत्रों में कमज़ोर स्थिति में हो जाएंगे। हिंदी को लागू करने और न करने के आंदोलनों के बीच वर्ष 1963 में 'राजभाषा कानून' पारित किया गया जिसने 1965 के बाद अंग्रेज़ी को राजभाषा के तौर पर इस्तेमाल न करने की पाबंदी को खत्म कर दिया। हालाँकि, हिंदी का विरोध करने वाले इससे पूरी तरह संतुष्ट नहीं थे और उन्हें लगता था कि पंडित नेहरू के बाद इस कानून में मौजूद कुछ अस्पष्टता फिर से उनके विरुद्ध जा सकती है।
- 26 जनवरी, 1965 को हिंदी देश की राजभाषा बन गई और इसके साथ ही दक्षिण भारत के राज्यों - खास तौर पर तमिलनाडु (तब का मद्रास) में, आंदोलनों और हिंसा का एक ज़बर्दस्त दौर चला और इसमें कई छात्रों ने आत्मदाह तक

कर लिया। इसके बाद लाल बहादुर शास्त्री के मंत्रिमंडल में सूचना और प्रसारण मंत्री रहीं इंदिरा गांधी के प्रयासों से इस समस्या का समाधान ढूंढ़ा गया जिसकी परिणति 1967 में राजभाषा कानून में संशोधन के रूप में हुई। उल्लेखनीय है कि इस संशोधन के ज़रिये अंग्रेज़ी को देश की राजभाषा के रूप में तब तक आवश्यक मान लिया गया जब तक कि गैर-हिंदी भाषी राज्य ऐसा चाहते हों; आज तक यही व्यवस्था चली आ रही है।

क्यों हिंदी को बनना चाहिये आधिकारिक भाषा?

- भारत एक विशाल और विविधताओं वाला देश है जहाँ प्रशासन और लोगों के मध्य संवाद स्थापित करने के लिये एक सामान्य भाषा की आवश्यकता है। भारत की आज़ादी के सूत्रधार रहे राजनेताओं का भी यही मानना था कि अधिकारिक भाषा के तौर पर किसी ऐसी भाषा का चुनाव किया जाए जो बहुसंख्यक जनता द्वारा बोली जाती हो या फिर भारतीय सभ्यता की शास्त्रीय भाषा के तौर पर हिंदी या संस्कृत को यह दर्ज़ा दिया जाए।
- दिलचस्प तथ्य यह है कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और बी. डी. सावरकर जहाँ हिंदी भाषा के पक्ष में थे, वहीं अम्बेडकर संस्कृत पर बल दे रहे थे, जबकि सुभाष चन्द्र बोस का कहना था कि हिंदी को ही रोमन में लिखा जाए।
- भारत की एक और अनूठी विशेषता अपनी मातृभाषा में ही बुनियादी शिक्षा सुनिश्चित करने की अवधारणा है। इसके लिये संविधान में भाषाई अल्पसंख्यक समूहों के बच्चों के लिये प्राथमिक स्तर मातृभाषा में शिक्षण की पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करने का प्रावधान किया गया है।
- गौरतलब है कि संयुक्त राष्ट्र के द्वारा 21 फरवरी को अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस घोषित करने से पूर्व ही भारतीय संविधान के संस्थापकों ने मातृभाषाओं में शिक्षण से बच्चे को अपनी पूरी क्षमता के साथ सक्षम बनाने और विकसित करने को शीर्ष प्राथमिकता दी है।
- यह अवधारणा संयुक्त राष्ट्र के 'विश्व मातृभाषा दिवस 2017' के विषयों के साथ पूरी तरह से साम्यता रखती है जिसके अंतर्गत शिक्षा, प्रशासनिक व्यवस्था, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और साइबर स्पेस में स्वीकार किये जाने के लिये बहुभाषी शिक्षा की क्षमता विकसित करना आवश्यक है। भारत की भाषा नीति बहुलवादी रही है जिसमें प्रशासन, शिक्षा और जन संचार के अन्य क्षेत्रों में मातृभाषा के उपयोग को प्राथमिकता दी गई है।

क्यों बरतनी होगी सावधानी?

- भारत बहुभाषी देश है जहाँ अलग-अलग क्षेत्रों की अलग-अलग भाषाएँ और बोलियाँ हैं। उनमें से किसी का भी महत्त्व हिंदी से कम नहीं है। लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर कोई एक ऐसी भाषा नहीं है, जिसे सभी राज्यों या इलाकों को जोड़ने वाली कहा जा सके। हालाँकि, अतीत में भाषा को लेकर जिस तरह के विवाद हो चुके हैं, उनके मद्देनज़र हिंदी को बढ़ावा देते समय यह भी ध्यान रखना होगा कि इसकी वज़ह से दूसरी भाषाओं पर कोई नकारात्मक असर न पड़े।
- उत्तर भारत के लगभग सभी हिस्सों में साधारण लोगों की बोलचाल, पढ़ाई-लिखाई से लेकर संस्थागत स्तर तक हिंदी को जगह मिली हुई है। लेकिन इसके अलावा भी देश के ज़्यादातर इलाकों में हिंदी ने जैसी जगह बनाई है, उसमें इसके विकास और प्रसार की बड़ी संभावनाएँ हैं। पर यह तभी संभव हो पाएगा जब सरकार के स्तर पर इसके प्रयोग को बढ़ावा दिया जाएगा और कुछ मामलों में इसे अनिवार्य भी बनाया जाएगा।

निष्कर्ष

भारतीय लोकतंत्र अपनी शैशवावस्था में ही भाषायी विवादों में घिसटकर लहूलुहान हो चुका है, लेकिन अब हम एक परिपक्व लोकतंत्र हैं। सच यह भी है कि आज हिंदी धीरे-धीरे देश के कोने-कोने में फैल रही है और इसका कारण हिंदी सिनेमा और टेलीविज़न, प्रवासन तथा संस्कृतियों का आपस में घुलना-मिलना है। हिंदी को संवाद शून्यता खत्म करने वाली भाषा माना जा रहा है, लेकिन हमें यह ध्यान रखना होगा कि यह स्थानीय भाषाओं की जगह नहीं ले सकती। भारत ने भाषायी आधार पर राज्यों के निर्माण की व्यवस्था को स्वीकार किया है क्योंकि उप-राष्ट्रीय पहचान की वास्तविकताओं को नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता।

ये कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें हिंदी के सबसे आक्रामक तरफदार अक्सर भूल जाते हैं। हालाँकि, सरकार को भी इन आक्रामक तरफदारों के समान व्यवहार नहीं करना चाहिये, क्योंकि भाषा के नाम पर एक नई जंग विकास के पथ पर आगे बढ़ते भारत के पैरों की बेड़ियाँ बनने का ही काम करेंगी।